National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(60): 178-181
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

**डॉ. पूनम कुमारी**
पूर्व सहायक संस्कृत प्रवक्ता,
दयानन्द महाविद्यालय, हिसार।

**Correspondence:**
**डॉ. पूनम कुमारी**
पूर्व सहायक संस्कृत प्रवक्ता,
दयानन्द महाविद्यालय, हिसार।

# द्रौपदी के विचारों में पतिव्रताधर्म और साम्प्रतिक परिप्रेक्ष्य में उस का औचित्

**डॉ. पूनम कुमारी**

## सारांश

'द्रौपदी' प्रतिभाराय महोदया जी द्वारा रचित याज्ञसेनी का हिन्दी रूपान्तरण है। ज्ञानपीठ व मूर्तिदेवी पुरस्कारों से पुरस्कृत इस उत्कलभाषीय उपन्यास का दस से अधिक भाषाओं में रूपान्तरण हो चुका है। अब इसे संस्कृतभाषा में रूपान्तरित किया है प्रो. भागीरथीनन्दा महोदय जीने जो समस्त संस्कृतजगत के लिए आह्लाद का विषय है।

'द्रौपदी' उपन्यास में प्रतिभाराय जीने द्रौपदी की आन्तरिक पीड़ा के साथ-साथ समाज में अनेकों पीड़ित महिलाओं के जीवन पर दृष्टिपात किया है। एक और जहाँ अपने पतिव्रता धर्म से अपने जीवन का सुखमय आदर्श स्थापित करती है वहीं दूसरी ओर नारी अपमान ध्वंस का कारक है जो महाभारत के माध्यम से स्वतः सिद्ध है।

द्रौपदी अपने पतिव्रता धर्म से अपने सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों का निर्वहन करती है पांचों के प्रति समभाव रखते हुए। खुद को भक्तिमय भाव से सखा श्री कृष्ण को समर्पित कर चुकी है। निष्काम भाव से अपनी कर्मपालना करने में प्रवृत्त है देवी द्रौपदी। महल में दासियों के होने पर भी अपने पतियों के प्रति सेवा-सुषुषा का कार्य खुद करना पसन्द करती है उनका प्रियभोजन अपने हाथों से बनाती है। किसी के दोष-गुणों की चर्चा दूसरों के आगे नहीं करती कभी उन पर सन्देह नहीं करती अपनी कोई बात गोपन नहीं रखती केवल सुख की सहचरी नहीं है दुःख की अवस्था में भी साथ है बारह वर्षों का वनवास व एक वर्ष का अज्ञातवास बिताने। हर परिस्थिति में शक्ति के रूप में प्रस्तुत है देवी-द्रौपदी। उनके धर्म की शक्ति इतनी प्रबल है कि पंच पाण्डव सौ कौरवों की महती सेनाओं को पराजित कर धर्मस्थापना कर सकें।

जब-जब नारी जाति का अपमान होता है पूरी मानवता कलंकित होती है। हमारा भारत देश सभ्यता और संस्कृति ही जिसकी पहचान है। ये हमारा भारतदेश श्रीराम और कृष्ण की जन्मस्थली है जिन्होंने नारीमान का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत किया। त्रेतायुग में नारी का मानमर्दन करने वाले रावण समेत सम्पूर्ण लंका का विनाश-स्वयं पुरुषोत्तम राम ने किया। द्वापर में देवी द्रौपदी का मानमर्दन करने वाले सम्पूर्ण कौरवजाति के विनाश में साथ थे भगवान श्री कृष्ण। नारी का तिरस्कार किसी भी युग में सहनीय नहीं ये केवल विनाश का निमन्त्रण मात्र है।

नारी-मां है, जननी है, पालन करने वाली, शक्ति-स्वरूप है, त्याग व सहनशीलता की मूर्त है हर रूप में पूजनीय है नारी- ऐसी नारी का जब, जहाँ जिस स्थान व परिवेश में अपमान होता है वो स्थान मृतप्राय हो जाता है। वहां के संस्कार व संस्कृति नष्ट हो जाते हैं। जब भगवान खुद नारी के सम्मान के रक्षक है तो ये तुच्छ मानव नारी प्रति घृणित व्यवहार करते हुए क्यों नहीं कांपता। क्यों मानव दानव बनता जा रहा है।

'द्रौपदी' उपन्यास अपने दुष्टकर्मों के प्रभाव को देखने का स्पष्ट प्रतिबिम्ब है। अ मानव या तो खुद को सुधार ले अपनी अच्छी सोच से खुद को बदल ले नारी जाति के सम्मान का रक्षक बन, अन्यथा सम्पूर्ण विध्वंस के लिए खुद को प्रस्तुत कर। यही युगों-युगों की नीति है। यही है अन्याय पर न्याय की और अधर्म पर धर्म की पुनः स्थापना और साम्प्रतिक परिप्रेक्ष्य में उसका औचित्य।

**भूमिका -**

'द्रौपदी' प्रतिभारायमहोदया जी द्वारा रचित 'याज्ञसेनी' का हिन्दी रूपान्तरण हैं इसे हिन्दी भाषा में रूपान्तरित करने का श्रेय 'श्री शंकरलालपुरोहित' जी को जाता है और आज ये भव्यसम्मेलन जिस खुशी में मनाया जा रहा है उसका श्रेय जाता है प्रो. भागीरथीनन्दा महोदय जी को जिन्होंने "याज्ञसेनी' उपन्यास का संस्कृत रूपान्तरण किया है। महोदय जी साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 2012 में श्रेष्ठ संस्कृत- अनुवादक के रूप में पुरस्कृत हैं। व्यास भारती सम्मान, उत्तर भारतीय युवाविपश्चितसम्मान, संस्कृत भूषण इत्यादि सम्मानों से अलंकृत महोदय जी को इस सम्मानीयावसर पर हार्दिक बधाई व धन्यवाद ज्ञापित करते हैं जो सम्पूर्ण संस्कृत जगत के लिए गौरव का विषय है । याज्ञसेनि -

जैसा कि नाम से ही विदित होता है - जो यज्ञ से पैदा हुई' याज्ञसेनि जिसका जन्म ही दिव्य, आलोकमय, पवित्र है उसके कर्म अपवित्र कैसे हो सकते हैं?

वह समाज के द्वारा दोषी क्यों?

इन्हीं समस्याओं का समाधान द्रौपदी' उपन्यास का सारतत्त्व है

'द्रौपदी' उपन्यास में महोदया प्रतिभा राय जी 'द्रौपदी' की अन्तरिक पीड़ा का हृदयग्राही और मार्मिक वर्णन प्रस्तुत करती हैं।

**द्रौपदी का पतिव्रता धर्म -**

देवी द्रौपदी के लिए स्वयंवर का आयोजन अर्जुन द्वारा शर्त का पूरा करना और देवी द्रौपदी को प्राप्त करना। इसके बाद शुरू होता है देवी द्रौपदी का पतिव्रता धर्म- जन्म का उद्देश्य तो आकाशवाणी माध्यम से पूर्व ही विदित है। भक्तिमय भाव से जिस कृष्ण को वह सखा रूप में देखती है वो भी उन्हें सचेत कर चुके हैं –

हे देवी द्रौपदी -

पृथ्वी के दुराचारियों का विनाश करने के लिए जन्मी हो । बाह्य शत्रु को जीतने के लिए पहले हम आन्तरिक शत्रु अर्थात् इन्द्रियों को जीते। तुम कामना, वासना, मन हृदय और बौद्धिक विचारों को धर्म की स्थापना के लिए उत्सर्ग कर दो । महत्तर स्वार्थ के लिए तुच्छ स्वार्थ की बलि दी जा सकती है । वही जीवन की महानता प्रतिपादित कर सकता है । देवी द्रौपदी ने समझ लिया कि श्रीकृष्ण ही धर्म प्रवर्तक है और उसी क्षण भक्तिमय सखारुप श्री कृष्ण के आगे उत्सर्ग कर दिया।

स्वयंवर में जिस अर्जुन को पतिरूप में वरण किया उसे अपनी आत्मा व हृदय में स्थान दे जैसे हि मां कुन्ती का आर्शीवाद लेने घर की चौखट पे प्रवेश करते हैं - धर्मराज युधिष्ठिर - जिन्हें धर्मराज के रूप में जाना जाता है अपनी मां को सम्बोधित करते हुए कहते हैं मां आज हम एक दुर्लभवस्तु लायें है' कपाट खोलकर देखो। अन्दर से आवाज आती है " बेटों, जो लाये हो पांचों भ्राता समभाग में बाँट लो"

युधिष्ठिर के सम्बोधन व कुन्ती माँ के प्रत्युत्तर पर द्रौपदी अवाक् रह गई। यहीं से शुरू होती है देवी द्रौपदी की आन्तरिक पीड़ा।

क्या धर्मराज युधिष्ठिर का देवी द्रौपदी को एक वस्तु के रूप में सम्बोधित करना उचित था?

मां कुन्ती जैसे ही बाहर आ देखती है तो सन्न रह जाती है युधिष्ठिर को उनके कथन की त्रुटि का करवाती है पर वचन की प्रतिबद्धता देखिए जो दोनों तरफ से थी। कहे जा चुके हैं- आज के समय से बहुत भिन्न भा वह समाज वचन की बड़ी महत्ता भी रघुकालीन त्रेतायुग की तरह गोस्वामी तुलसीदास जी श्री राम चरित मानस के अयोध्या काण्ड' में इस चौपाई का वर्णन करते है

**" रघुकुल रीत सदा चली आई,**
**प्राण जाये पर वचन न जाई ।। "**

कभी त्रेता में इसी तरह वचनपालना में चौदह वर्षो तक पतिसँग वनवास में दुःख भोगती सीता मां को अपने सतीत्व की अग्निपरीक्षा के बाद भी समाज की लांछना को असहय पाते हुए धरती मैया की गोद में शरण लेनी पड़ी।

आज फिर से द्वापर युग के अन्तिम क्षणों में माँ कुन्ती के वचन को निभाने के लिए आन्तरिक हृदय की पीड़ा के साथ अपने जीवन को आहूत करने जा रही है देवी द्रौपदी।

देवी द्रौपदी चिन्तन करती है कि ये केवल वचन है या फिर विधि का विधान। धर्मराजयुधिष्ठिर का मां 'दुर्लभवस्तु' के रूप मे सम्बोधन, कुन्ती मां का प्रत्युत्तर, पति अर्जुन की मां और बड़े भाई के प्रति वचनपालन की कटिबद्धता, महर्षि वेदव्यास जी व कुन्ती मां का संवाद, पूर्वद्रष्टा भक्तिरूप-सखा कृष्ण का पूर्वसंकेत निष्प्रयोजन तो नहीं हो सकते किसी महानत्तम उद्देश्य की प्राप्ति का साधन है द्रौपदी और वो है धर्मस्थापना।

एक ओर सौ कौरवों की महत्ती संख्या अधर्म के पथपर, दूसरी और पांच पाण्डव धर्मस्थापना का उत्तरदायित्त्व लिए । उन्हीं पाँच पाण्डवों को एकसूत्र में बांधे रखने का आधार है द्रौपदी। लक्ष्य यदि इतना महान है तो निजि तुच्छ स्वार्थ की बलि दी जा सकती है। पृथ्वी पर धर्मस्थापना के महानत्तम उद्देश्य की पूर्ति में देवी द्रौपदी ने खुद को आहूत कर दिया।

महोदया प्रतिराय जी समाज की तुच्छ सोचपर कुठाराघात करते हुए लिखती है जो लोग अपने साहित्य व संस्कृति के गूढ़ रहस्यों को नहीं जानते हैं वे देवी द्रौपदी को हेयदृष्टि से देखते हैं। इसलिए उन्होंने अपने उपन्यास में महाभारत की मूल बातों व रहस्यों का

उद्घाटन किया है और देवी द्रौपदी के सतीत्व को सिद्ध किया है। वो द्रौपदी जिन्होंने हर कदम पर चुनौतियों का सामना किया खुद को भक्तिमय सखारूप श्री कृष्ण को समर्पित करके।

समस्या है पुरुषप्रधान समाज के तुच्छ विचारों की जो सदियों से चला आ रहा है गलती पुरुष की और भुगतान स्त्री का ।धर्मराज युधिष्ठिर की प्रथम गलती उन्हें दुर्लभ- वस्तु के रूप में प्रस्तुत करना क्या कम थी जो द्यूतक्रीडा के आदी महाराज युधिष्ठिर अपना राज्य सब हार कर 'वस्तुरुप' मानकर देवी द्रौपदी को भी दाव पर लगा बैठे।

कुरुसभा का अत्यन्त घृणित लज्जाजनक व अपमानजनक दृश्य, देवी द्रौपदी विद्वतजनों, गुरुजनों, और अपने पंचपतियों के सम्मुख खुद को असहाय पाती हुई भक्तिमय सखारुप श्री कृष्ण की शरण लेती है अपनी लाज बचाने के लिए पूर्णतः आत्मा से आह्वान करती है। उस दिन श्री कृष्ण ने कुरुसभा में जो अलौकिक चमत्कार दिखाकर देवी द्रौपदी की लाज बचाई उसने न केवल देवी द्रौपदी अपितु सम्पूर्ण नारी जाति के कों मान को बढ़ा दिया। शायद ये देवी द्रौपदी के सतीत्व की सबसे बड़ी परीक्षा थी।

कुरुसभा में अपने अपमान के बाद द्रौपदी अपनी लाज बचाने वाले भक्तिमय सखारूप श्री कृष्ण को कहती है जिस देश में नारी का सम्मान रखने वाले पुरुष उद्यत नहीं होते उस देश का ध्वंस अवश्यंभावी है। वहाँ की पुरुष जाति निंदित कलंकित हो जाती है। धन्यवाद ज्ञापित करती है अपने भक्तिमय सखा- श्रीकृष्ण का आज आपने मेरा ही मान नहीं रखा, , इस देश की नारी जाति का मान रख लिया।

द्युतक्रीडा में हारने के बाद पाण्डव इन्द्रप्रस्थ का सुख-वैभव त्याग वन की ओर निकल पड़ते है अपने 12 वर्ष के वनवास व 1 वर्ष के अज्ञातवास की शर्त को पूरा करने। वे काम्यकवन में शरण लेते हैं और किरात लोगों से मैत्री करते हैं मानवता धर्म को सर्वोपरि रखते हुए। गुरुद्रोण और कौरवों द्वारा उनके प्रति किए गए अन्याय को वो उचित नहीं समझते इस धरा पर हर मनुष्य समान है ईश्वर की सन्तान के रूप में । इसी बीच अर्जुन दिव्यास्त्रों की प्राप्ति हेतु इन्द्रकील पर्वत पर तपस्या करने जाते हैं पंचवर्ष तक साधना में लीन रहते है इसी बीच सखाकृष्ण द्वारिका का सुख-वैभव छोड़ बद्रिका आश्रम में निवास करते है और द्रौपदी के अगोचर प्रतिरक्षी के रूप में उनके साथ रहते हैं जिन्हें देवी- द्रौपदी पति अर्जुन की प्रतिछाया के रूप में महसूस करती है लेकिन वास्तविकता नहीं जान पाती। ये बात उस समय प्रकट होती है जब अर्जुन दिव्यास्त्रों की प्राप्ति के बाद काम्यकवन लौटते है तब श्री कृष्ण अपनी द्वितीयपटरानी सत्यभामा के साथ काम्यकवन आते हैं तभी दोनों सखाओं की बातचीत से इस सत्य का उद्घाटन होता है कि मैं जिसे अर्जुन समझती रही वह मेरे अर्जुन का ही अभिन्नरूप सखा-श्रीकृष्ण थे।

सत्यभामा पूरे एक सप्ताह तक मेरे युग्मजीवन, मेरा श्रीकृष्ण के प्रति सखाभाव में अर्जुन की सहृदय स्वीकृति देख बड़ी अचम्भित भी एक दिन जब सभी पाण्डव श्रीकृष्ण के साथ शबरपल्ली में गये हुए थे तो उन्होंने मुझसे इस रहस्य का का राज जानना चाहा कि बहन कृष्णा- अपने पंचपतियों को वंश में करने के लिए क्या तन्त्र-मन्त्र, जादू-टोना या जड़ीबूटी का इस्तेमाल करती हो? यहाँ तक कि श्रीकृष्ण भी अपनी सहृदय सखी के लिए अपनी द्वारिका छोड़ पंचवर्ष बद्रिका आश्रम में रहे कठिन परिस्थिति में साथ देने का प्रण जो किया है। तब देवी - द्रौपदी अपने पतिव्रता धर्म के विषय में सत्यभामा को बताती है- कहती है हो सके तो इसे अपने जीवन में लगाना,अपने अन्दर के अहंकार को दूरकर पतियों में अपने नारीत्व को पूजा के फूल की तरह निष्काम प्रेम के जल से सुरभित कर उड़ेल देती हूं। किसी भी परिस्थिति में ईर्ष्यातुर न होने की चेष्टा करती हूँ। सहज रहने का मेरा प्रयास रहता है। पति के भोजन-शयन से पहले मैं कभी भोजन-शयन नहीं करती। उनके जागने से पहले मैं जागती हूं। उनके कार्य में कभी आलस्य नहीं करती। दूर से यात्रा कर लौटते हैं तो उनके लिए मैं आसन, जल, भोजन, विश्राम् का आसन प्रस्तुत किए रखती हूँ। दास-दासी होने पर भी घर के कामों पर मैं निगाह रखती हूँ। उनका प्रियभोजन स्वयं बनाती हूं और बैठकर भोजन कराती हूँ। अपने दुःख या दुश्चिन्ता का उनके माथे पर बोझ नहीं डालती। बरन उनकी ही चिंताओं में भागीदार होकर अपना विचार देती हूं। प्रसाधन, स्नान और वेश-भूषा के विन्यास में बहुत अधिक समय नहीं देती। पति दूर हों तो फिर प्रसाधनादि से दूर रहती हूं। उनकी नापसंद वाले काम मैं पसन्द नहीं करती। उनकी पसंद-नापसन्द बिना बताये ही भांप लेती हूँ । व्यर्थ की बहस के लिए मेरा मन कभी नहीं जाता और न बेमतलब हंसते-हंसते लोट-पोट होती हूं। चाल-चलन, आचार-विचार, भोजन, विश्राम में भी संयम बरतती हूँ। सबसे बड़ी बात यह है कि मैं उनपर कभी संदेह नहीं करती । न उन पर अनावश्यक शिकायतों का ढेर लादती हूँ । उसी तरह कोई बात उनसे गोपन नहीं रखती। एक बात और खास है उनके आगे उनके वंश या मां कुन्ती - के बारे में एक शब्द भी नहीं कहती। पांचों के प्रति समता बरतती हूं। किसी एक के दोष-गुणों की दूसरे के आगे चर्चा नहीं करती। पति दासी को कोई आदेश दें, इससे पहले ही मैं तत्पर हो उठती हूँ पीहर का ठाठ, विलास, बडप्पन कभी पतियों के आगे नहीं बखानती, इसी तरह किसी और पुरुष के धन, ऐश्वर्य की तुलनाकर अपने भाग्य को नहीं धिक्कारती। यहां तक कि पति के आगे किसी अन्य नारी को अपने से अधिक सौभाग्यवती के रूप में नहीं बताती। अपनी अजस्त्र कामनाओं को पतियों के आगे रखने की जरूरत नहीं समझती। निर्जन में अन्यपुरुष के साथ समय नहीं बिताती । खलप्रकृति की स्त्रियों से बचकर रहती हूं। पति के आगे स्वयं को सतेज, सुन्दर, चिर- यौवना के रूप में रखने का प्रयास रहता है। पति के कारण ही

हम सन्तानवती हैं, सौभाग्यवती हैं, गृहकर्ता और सुखी हैं। संख्य, सुरक्षा, सामाजिक मान एवं मातृत्व प्रदान में पति कभी कुंठित नहीं होते। अतः उन्हें "हम वास्तव में प्रेम प्रदान करती है यह अनुभव करने का मौका देना क्या कर्तव्य नहीं मेरा ?

उनका सिर्फ सुख ही हमारा नहीं है, दुःख भी हमारा है। दुःख में, विपद में पति को साहस देना, शक्तिदेना स्त्रीधर्म है। बस इसी बात पर ध्यान रखती हूँ।

सुनकर सत्या घबरा उठी- "बस, बसकरो कृष्णा! ये सब बातें करना तो दूर सुनकर ही सिर चकरा रहा है। हम से यह सब नहीं होने का। लगता है, लायक पत्नी हो सकना भी एक साधना का फल है।

मैं हंस पड़ी- "यही तो भूल करती हो, कृष्ण तुम्हारे हो, यह न सोच तुम कृष्ण की क्यों नहीं बन जाती? बस इसी मैं तो बन्ध जाएगें। चन्द्रावली गोपियों में अन्यतम हैं। कृष्ण की परम- प्रेमिका ।चन्द्रावली और श्री राधा में भावगत भेद क्या है? चन्द्रावली का श्री कृष्ण के प्रति भाव है- " त्वं ममैव" यानी तुम मेरे हो। जबकि श्री राधा कहती है - "तवैवाहं" अर्थात् मैं आपकी हूँ। बस इसी भेद के कारण चन्द्रावली से श्रेष्ठ हो जाती है। मेरा भी कृष्ण के प्रति यही भाव है। मैं कहती- हे कृष्ण, कृष्णा - आपकी है।"

जन्म से यही भाव लेकर श्रीकृष्ण के प्रति समर्पित हुई। मेरे इस समर्पण के भाव को जो गलत समझते हैं, वे श्रीकृष्ण को भी नहीं समझ पाते। कृष्णप्रेम मानवीय श्रृंगारधर्मी नहीं है। इस बात को मेरे पति भी समझते है, अतः कृष्ण प्रेम को वे अपना सौभाग्य ही समझते हैं। ये है द्रौपदी का पतिव्रता धर्म और सखाकृष्ण के प्रति पवित्रभक्तिमय भाव।

क्या आधुनिक समय में ऐसे पतिव्रता धर्म पर अडिग है नारी? आधुनिकरण की चकाचौंध में अपने संस्कारों व संस्कृति को भूलना अनुचित है। अपने संस्कृति व संस्कारों को बचाकर धर्मपूर्वक जीवन यापन करके भी हम अपने जीवन में आगे बढ़ सकते है। रिश्ते में त्याग व समर्पण की भावना अहं है। हमने क्या पाया ये सोचने की बजाय हमने क्या दिया ये सोचना सर्वश्रेष्ठ है। जीवन में एक- जीवन में एक- दूसरे के प्रति भावनाओं की महती भूमिका है जो उन्हें अच्छे से समझता है वह पूर्णत: श्रेष्ठ जीवन जी पाता है। द्रौपदी का पतिव्रता धर्म प्रत्येक नारी के लिए सर्वोच्च शिक्षा है जिन्हें अपनाकर वो अपने बिखरते परिवारों को बचा सकती है। द्रौपदी का पतिव्रता धर्म हर नारी के लिए चिन्तन व मनन का विषय है। द्रौपदी ने जिस धर्मका निर्वाह अपने पंचपतियों के प्रति किया क्या आज के समय में कोई नारी अपने पति के प्रति कर पाती है? अगर करती है तो श्रेष्ठा नारी के रूप में जानी जाती है।

महोदया प्रतिभाराय जी द्वारा लिखित द्रौपदी उपन्यास पढ़कर, द्रौपदी की मानसिक पीड़ा को अनुभूत कर हृदय द्रवीभूत हो जाता है. एक नारी के त्याग और सहनशीलता की पराकाष्ठा देखिए।

**निष्कर्ष -**

निष्कर्षतः देवी द्रौपदी महाभारत की ही नहीं अपितु भारतीय जीवन तथा संस्कृति का एक अत्यन्तमहत्त्वपूर्ण चरित्र है। कृष्ण समर्पित देवी द्रौपदी का जीवन अनेक दिशाओं में विभक्त होकर भी उसका व्यक्तित्व टूटता नहीं वह एक इकाई के रूप में निरन्तर आगे बढ़ती है और तात्कालिन घटनाचक्र को एक विशिष्ट आयाम देती है। महाभारत में पाण्डवों की जीत केवल पाण्डवों की नहीं थी वो एक सतीत्व की जीत भी थी देवी द्रौपदी के सतीत्व की जीत आजीवन कदम-2 पर चुनौतियों का सामना करते हुए अपने धर्मपथ पर कायम रहकर अपने सतीत्व को निभाया। अधर्म का नाशकर धर्मस्थापना में अहं भूमिका अदा की।

असमान्य विदुषी, भक्तिमती, दिव्याशक्ति-सम्भूत देवी द्रौपदी का त्याग वन्दनीय है। जो देवी द्रौपदी को हेयदृष्टि से देखता है वह अनुचित है उनकी धर्मप्रकाष्ठा की महानता को समुचित रूप से जानने के लिए महोदया प्रतिभारायजी का याज्ञसेनी उपन्यास सार्थक है। नारी कभी भी कमजोर नहीं है शक्ति के रूप में पूजनीय है। नारी जो अपने कर्मों में उच्चत्तम आदर्श को स्थापित किए अपने जीवनपथ पर आगे बढ़ती है वो हर नारी वन्दनीय है।

नारी को अबला समझना नारी की सहनशीलता फायदा उठाना, नारी को अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करना कहाँ से न्यायोचित है। समाज में अक्सर इसी तरह की बिडम्बनाएं देखी जाती है।
नारी वो है जो अपने सतीत्व की शक्ति से हर पथ पर अपने पति को विजयी बनाती है इतिहास साक्षी है सावित्री रूप में पति के प्राण तक वापिस लाती है। धर्मानुगामिनी बन पति को धर्म का अनुसरण करवाती है, एक ही घर को नहीं दो-2 घरों को स्वर्ण बनाती है नारी शक्ति का रूप है वह हर असम्भव को सम्भव बनाती है शक्तिस्वरुपा द्रौपदी अपने सतीत्व को निभा पाण्डवों के धर्म की विजयपताका फहराती है।

**मनुस्मृते सत्यमेव उक्तम् -**

**यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।**
**यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ।।**

(मनुस्मृति ३/५६ )

**अर्थात् -**

जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ स्त्रियों की पूजा नहीं होती है, उनका सम्मान नहीं होता है वहाँ किये गये समस्त अच्छे कर्म निष्फल हो जाते है।

**सन्दर्भग्रन्थ-**

1. याज्ञसेनि (प्रतिभाराय)।
2. द्रौपदी (शंकरलालपुरोहित) – हिन्दीरूपान्तरण।
3. याज्ञसेनि (प्रो. भागीरथिनन्द) – संस्कृतरूपान्तरण।